जैन समाजात प्रचंड खपाचे व लोकप्रिय मासिक

जैन जागृति

(Since 1969) www.jainjagruti.in

६२ ऋतुराज सोसायटी, पुणे–सातारा रोड,
सिटी प्राईडच्या पुढची लेन, पुणे ४११०३७.
ऑफिस मो. : ८२६२०५६४८०
मोबाईल : संजय ९८२२०८६९९७, सुनंदा ९४२३५६२९९१

❖ संस्थापक ❖
स्व. श्री. कांतीलालजी चोरडिया

संपादक व प्रकाशक : संजय के. चोरडिया
: सौ. सुनंदा एस. चोरडिया

❖ वर्ष ५८ वे ❖ अंक १ ला ❖ सप्टेंबर २०२६ ❖ वीर संवत २५५२ ❖ विक्रम संवत २०८२

या अंकात

	पान नं.
● जैन जागृति – ५८ व्या वर्षात पदार्पण	२३
● कव्हर तपशील	२६
● क्षमा : समस्याएँ और समाधान	२७
● श्री. सागर चोरडिया – सुयश	३१
● पर्युषण पर्व अध्यात्म का अमृत है	३३
● रजोहरण : छह क्षणिकाएँ	३४
● ।। जिनेश्वरी ।। अध्याय १० : द्रुमपत्रक	४३
● श्री कल्पसूत्र – भाग २	५१
● पर्युषण पर्व	५८
● जैन धर्माचा इतिहास आणि संस्कृतिवर आक्रमण	६७
● मानव शरीर का दुरुपयोग और अनुपयोग नहीं सदुपयोग करो	७०
● क्षमा – वर्तमान समय की सबसे बडी सामाजिक आवश्यकता	७२
● धर्माच्या कॉलम मध्ये जैन लिहा	७३
● बिन जाने कित जाऊँ – प्रश्नोत्तरी प्रवचन	७५
● धमाका एक ही पर्याप्त है	७९
● आपलेपणा	८२
● जैन धर्म और अपरिग्रहवाद	९१
● नफरत V/s प्यार	९४
● एक नजर भीतर की ओर	९५
● भगवान महावीर के सिद्धांत	९९
● कृत्रिम बुद्धिमता (AI) का उपयोग	११५
● क्षमा भावना – मिच्छामि दुक्कडम्	११८
● क्षमावीर महाराज उदायन	११९
● वन मिनिट प्लीज	१२०
● आनंद अलग ही होता है	१२१
● 'मैं' को हटाओ 'मैं' से मिलो	१२३
● शारिरीक विकास के आवश्यक तत्त्व	१२५
● आत्माबोध ही है श्रेष्ठ ज्ञान	१२७
● परिवार वो जडें है, जो हमें स्थिर और मजबूत बनाता है	१२९
● प्रमाद मुक्ति : किल मुक्ति देव	१३०

- पुरुषों के चरित्र–निर्माण में महिलाओं की भूमिका १३९
- जीवन की पावर फुल बातें १४०
- तनाव से रहिए नौ कदम दूर १४१
- आत्मा की उपासना का अद्वितीय पर्व है – पर्युषण १४७
- सुक्ति से मुक्ति : बिखरे मोती १५१
- हास्य जागृति १५४
- श्री जैसलमेर तीर्थ – राजस्थान १६३
- कर्मवीर भाऊराव व लक्ष्मीबाई पाटील त्यागाचे मुर्ती मंत्र प्रतीक १६६
- निद्रावस्था आणि अध्यात्म १६७
- जीवन बोध – त्याग का आदर्श १६९
- मृत्यु को मत भूलिए १७१
- लेश्या १७३
- सर्वोत्तम दवा है जिनवाणी १७५
- विश्व जैन संगठन – सम्मेदशिखर अंदोलन १८७
- आनंद जन्मोत्सव, अहिल्यानगर १८८
- मार्केट सेस रद्द करा – आंदोलन १९०
- वाचकांचे मनोगत १९२
- भगवान महावीर हॉस्पिटल, दिल्ली १९५
- C.A. अजयजी मुथा, अहिल्यानगर १९६
- सूर्यदत्त नॅशनल स्कूल AAA+ मानांकन १९६
- स्मार्ट दिसण्या बरोबर, स्मार्ट विचार करा १९७
- वीतराग सेवा संघ, पुणे १९९
- सासूबाईची एक अट २००
- प्रेम जीवन की समृद्धी है २०३
- विपाक संहिता– सूक्तियाँ २०४
- आत्मदर्शन का अध्याय : स्वाध्याय २०५
- तप : कर्म निर्जरा एवं सुखशान्ति का आधार २०७
- चातुर्मास २०९
- जितो, चिंचवड–पिंपरी कार्यालय २११
- श्री. संजयजी नहार – एकसष्ठी समारोह २१२
- श्री. शैलेशजी पगारिया – पुरस्कार २१५
- जनगणना–धर्माच्या कॉलम मध्ये जैन लिहा २२३
- शिघ्र सफर, अंतिम सफर बन सकता है २२६
- विविध धार्मिक, सामाजिक बातम्या

जैन जागृति – ''मॅगझिन पोस्ट'' सुविधेसह वर्गणीचे दर (महाराष्ट्र साठी)

✲ वार्षिक वर्गणी – रु. ८०० ✲ त्रिवार्षिक वर्गणी – रु. २३००

''मॅगझिन पोस्ट'' द्वारा बंद पाकिटातून मासिक घरपोच पोहचण्याची १००% हमी.

या अंकाची किंमत ५० रु. ● **Google Pay - M. 9822086997**

'जैन जागृति' हे मासिक मालक, मुद्रक व प्रकाशक एस. के. चोरडिया यांनी प्रकाश ऑफसेट, शॉप नं. १२–१३, पर्वती टॉवर्स, पुणे – ४११००९ येथे छापून ६२ बी, ऋतुराज सोसायटी, पुणे–सातारा रोड, पुणे – ४११ ०३७ येथे प्रसिध्द केले. संपादक – एस. के. चोरडिया

"Jain Jagruti" monthly magazine is owned, printed & published by S. K. Chordia, Printed at Prakash Offset, Shop No. 12-13, Parvati Towers, Pune 411009. Published at 62-B, Ruturaj Society, Pune - Satara Road, Pune - 411 037. Editor - S. K. Chordia

टिप : या अंकात प्रसिध्द झालेल्या मताशी संपादक सहमत असतीलच असे नाही. जैन जागृति संबंधित कोणत्याही कायदेशीर कारवाईसाठी पुणे न्यायलय क्षेत्र ग्राह्य धरले जाईल.

जैन जागृति

''धर्म प्रभावना'' व ''समाज जागृति''चे ५७ वर्ष पूर्ण

५८ व्या वर्षात पदार्पण...

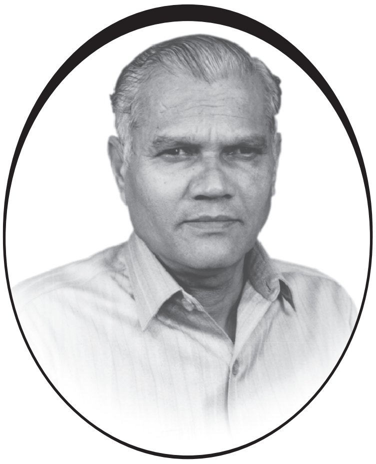

जैन जागृतिचे संस्थापक
स्व. श्री. कांतीलालजी फुलचंदजी चोरडिया

संपादक व प्रकाशक
संजय चोरडिया **सौ. सुनंदा चोरडिया**

सप्टेंबर २०२६ – पर्युषण अंका बरोबर गेली ५७ वर्षे ध्येयनिष्ठ, व्यासंगी आणि विवेकी पत्रकारितेची कास धरुन समाजोन्नतीचा वसा घेतलेले ''जैन जागृति'' मासिक ५८ व्या वर्षात पदार्पण करीत आहे.

वीतराग प्रभू व गुरु भगवंताचे आशिर्वाद, वर्गणीदार, जाहिरातदार, लेखक, पत्रप्रचारक, ऑफिस स्टॉफ, प्रिंटींग प्रेस, बायंडर, पोस्ट ऑफीस आणि हितचिंतक यांच्या सहयोगाने व सहकार्या मुळेच जैन जागृतिने ५७ वर्षे आपली यशस्वी वाटचाल पूर्ण केली आहे. या सर्वांचे खूप खूप आभार. धन्यवाद !

पुणे शहरातून गेली ५७ वर्षे दरमहा नियमितपणे प्रकाशित होणारे 'जैन जागृति' मासिकाची सुरुवात १५ ऑगस्ट १९६९ रोजी स्व. श्री. कांतीलालजी चोरडिया यांनी केली. त्याकाळी मासिके व वर्तमान पत्रामधून जैन समाजाची फार थोडी माहिति प्रसिद्ध होत होती. त्यातही जैन धर्माबद्दल, समाजाबद्दल चूकीची माहिती येत असे. सर्वांना जैन धर्माची खरी ओळख व्हावी, जैन इतिहास, जैन कथा साहित्य, दीपावली जैन विधी, जैन तीर्थक्षेत्र इ. माहिती सर्वांना व्हावी या उद्देशाने 'जैन जागृति' मासिक सुरु केले.

श्री. कांतीलालजी यांच्या निधनानंतर गेल्या २७ वर्षापासून 'जैन जागृति' मासिकाची धुरा संजय चोरडिया व सौ. सुनंदा चोरडिया सांभाळत आहे. 'जैन जागृति'चा मुळ गाभा तसाच ठेवून, त्यात नवीन विचाराची, आधुनिकतेची भर घालून मासिक प्रकाशनात उच्च शिखर गाठत आहे.

धर्म, सुसंस्कार व सदाचाराला प्रोत्साहन देणारे साहित्य

जैन जागृति मासिकात दरमहा धार्मिक, सामाजिक, ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, कौटुंबिक इ. सर्व स्पर्शी लेख प्रसिध्द होतात. यातून सुसंस्कार व सदाचार यांना प्रोत्साहन देवून समाजाचे नैतीक स्तर वाढवण्याचे कार्य केले जात आहे.

जैन समाजात अनेक मासिके, साप्ताहिके प्रसिध्द होतात. या पैकी काही मासिकात, साप्ताहिक मध्ये

क्षमा : समस्याएँ और समाधान

लेखक : डॉ. धर्मचन्द जैन, जयपूर

जो लोग क्षमा करने में अपना हित नहीं समझते, वे अनेक प्रश्नों, शंकाओं या समस्याओं से आक्रान्त रहते हैं। यहाँ पर उस प्रकार की समस्याओं की चर्चा कर उनका समाधान प्रस्तुत करने का प्रयास किया जा रहा है–

⁂ **समस्या १.–** मैं किसी को उसके असद् व्यवहार एवं अपराध के लिए यदि क्षमा कर दूँगा, तो उसके असद् व्यवहार एवं अपराध करने की आदत नहीं सुधरेगी, बल्कि वह अधिक स्वच्छन्दता से त्रुटि करेगा, इसलिए क्षमा करना उचित नहीं।

समाधान – इसमें हमारी दृष्टि दूसरों को सुधारने या ठीक करने की ओर केन्द्रित है। वह सुधार भी मात्र हमारे प्रति किए जा रहे व्यवहार से सम्बन्ध रखता है, सबके प्रति कृत व्यवहार से नहीं। यानी कि हम दूसरों को हमारे अनुसार चलाना चाहते हैं। वह दूसरों के प्रति असद् व्यवहार करता है तो हमें कोई विचार नहीं होता। हमारा किसी ने कहना नहीं माना तो हम उसके प्रति गाँठ बाँध लेते हैं। किसी ने हमारा ध्यान नहीं रखा तो उसके प्रति भी विरोधी विचार उत्पन्न हो जाता है। कोई हमारा अपमान कर देता है तो उससे बदला लेने की ठान लेते हैं, और सोचते हैं कि उसको मजा चखा कर रहूँगा, चाहे हमें उसके कारण कितनी ही हानि क्यों न उठानी पड़े। इसमें धन की, तन की, मानसिक शान्ति एवं समाधि की तथा समय की भी हानि उठानी पड़ती है। किन्तु इस बात को हम बदले की भावना से आहत होने पर भूल जाते हैं।

दूसरों को सुधारने के पहले हमें स्वयं अपने को मानसिक एवं आत्मिक रूप से सशक्त बनाना चाहिए। छोटी-छोटी बातों के कारण उद्वेलित होना, क्रोध आना हमारी कमजोरी है। इस कमजोरी को क्षमाशीलता से दूर किया जा सकता है। ऐसा भी होता है कि सामने वाले व्यक्ति में इस प्रकार की त्रुटि करने की भावना न रही हो, किन्तु कदाचित हो गई हो, तो भी हमें उस पर क्रोध आता है। हमें उसकी मानसिक स्थिति एवं परिस्थिति का भी मूल्यांकन करना चाहिए !

क्षमा नहीं करने पर कोई सुधर जायेगा, यह आवश्यक नहीं है, अपितु उसके मन में भी हमारे प्रति द्वेष उत्पन्न हो सकता है। वह भी हमें अपना विरोधी या शत्रु समझ सकता है। हम हमारा ही नहीं दूसरे का हित भी ध्यान में रखेंगे तो वह भी हमारा हित करने में सहायक हो सकता है। यदि हमारे ही दृष्टिकोण से दूसरे को देखेंगे तो संघर्ष उत्पन्न होगा।

क्षमा करने से दूसरे में स्वच्छन्दता बढ़ेगी, यह आवश्यक नहीं है। कभी अधिक कसावट से विपरीत व्यवहार भी प्रारम्भ हो जाता है। खींचतान बढ़ती जाती है। जो समस्याएँ क्षमा करने एवं क्षमा माँगने से निपट सकती हैं, उनके लिए न्यायालय के चक्कर काटना व्यर्थ है। ●

⁂ **समस्या २. –** मैं क्षमा क्यों करूँ, क्षमा करने पर मुझे शक्तिहीन समझा जाएगा। भूल मेरी नहीं, भूल उसकी है।

समाधान – क्षमा करने वाला सदैव आन्तरिक रूप से बलवान् होता है। जो क्षमा नहीं करता वह आन्तरिक रूप से समृद्ध नहीं होता। विदुर नीति में कहा है- क्षमा बलं ह्यशक्तानां शक्तानां भूषणं क्षमा। जो निर्बल हैं, उनमें भी क्षमा करने का गुण उन्हें बलवान बनाता है और जो पहले से ही बलवान हैं उनके लिए क्षमा का गुण आभूषण के समान शोभावर्धक है। कई बार ऐसी धारणा देखी जाती है कि बेचारा क्या करता,

पर्युषण पर्व अध्यात्म का अमृत है

लेखक : सुमेर सिंह मुणोत, बेंगलोर. मो. : ९८४५५१०७५३

हमारा देश पर्वो का देश कहलाता हैं। एक वर्ष में ३६५ दिन है लेकिन भारत देश में उससे भी ज्यादा पर्व हैं। पर्व दो प्रकार के होते है भौतिक और आध्यात्मिक। भौतिक त्योंहार बाहरी साज-सज्जा व चकाचौंध से मनाए जाते है अर्थात ये पर्व हर्ष उल्लास के होते हैं। आध्यात्मिक पर्व से मन की सफाई व अन्दर पनप रहे कषायों से मुक्ति मिलती है तथा राग-द्वेष के कचरे को हृदय से बाहर निकालने का स्वर्णीम अवसर मिलता हैं यानि आत्मानंद होता हैं।

दीपावली को लौकिक पर्वो का सरताज कहते है तथा आम को फलों का राजा, ठीक उसी प्रकार जैनीयों के लिए अलौकिक पर्वों का शिरोमणी हैं पर्युषण पर्व। पर्युषण पर्व से आत्म सिद्धि, आत्म शुद्धि, मनो शुद्धि, कर्म शुद्धि एव् जीवन शुद्धि करने की अलौकिक शक्तियाँ मिलती है, पर्युषण पर्व जगने और जगाने का त्योंहार है। स्वयं की चेतना को भी जगाओ और दूसरों को भी प्रेरणा दो। इस पर्व में ज्यादा से ज्यादा धर्म आराधना करने तथा दान-पुण्य करने की प्रबल इच्छा जागृत होती है और क्षमा का आदान-प्रदान करने का सहज मौका भी मिलता है।

जैन धर्म के पर्युषण पर्व का मतलब है. अपने पास बैठना, आत्मा को आत्मा से मिलाना । लेकिन समय सिर्फ आठ दिन का ही है। यह पर्व एक कुशल व्यापारी की तरह है जो कम समय में अधिक से अधिक नफा कमाने की इच्छा रखता है। इसी प्रकार पर्युषण पर्व के सिर्फ आठ दिनों मे साल भर के कर्मों को निहार कर ज्यादा से ज्यादा जप, तप, स्वाध्याय से आत्मा व मन को निर्मल बनाते हुए संवत्सरी के दिन सभी से क्षमायाचना करना ही इसका मुख्य संदेश हैं।

तप से आत्मा परिशुद्ध होती है तथा पाप कर्म धुलते हैं, अपनी निरंकुश इच्छाओं पर अंकुश लगाने, जीवन के प्रति सरलता व सजगता लाने, कषाय मुक्त जीवन जीने का संदेश मिलता है। तप दो प्रकार के होते है, एक अपनी शक्ति अनुसार कुछ दिनों के लिए अन्न का त्याग करना, जिसे जैन परम्परा में तपस्या या उपवास कहते हैं। उप और वास यानी अपने भीतर बैठना, स्वयं में वास करना। तपस्या का सार है क्रोधावस्था से शांतिवस्था में आना, समभाव पूर्वक जीवन जीना, सरलता लाना, मन को संयमित, निग्रहित और सबल करना तथा कर्म बंधनों को तोड़ना। तपस्या आत्म महोत्सव है, जीवन संवारने की शैली है। उपवास के साथ आत्मवास करना जरूरी हैं।

दूसरी तरह की तपस्या है अपनी इच्छाओं में से कुछ अंश का त्याग करना। जैसे अपने दैनिक भोजन में से एक रोटी कम खाना, डनलप की गद्दी पर न सोकर आंगन में चटाई पर सोना, अपनी कमाई में से कुछ प्रतिशत मानव सेवा कार्य में लगाना आदि भी तपस्या ही कहलाती है।

पर्युषण पर्व परमात्मा से आत्मा का संबंध जोड़ने का अवसर प्रदान करता है। दिलो दिमाग में पनप रही बारीक गाँठों को खोलने का सुनहरा मौका देता है। गांठें चाहे गन्ने की हो या मन की, गाँठों में रस नहीं होता तो ऐसी अनावश्यक गाँठों को मन में संजोने से कोई फायदा नहीं। इस पर्व से क्षमा का आदान-प्रदान करने का, आपसी वैमनस्यता दूर करने का, भाई चारे की भावना व चेतना जागृत करने का मार्ग प्रशस्त होता है एवं संपूर्ण सुखानुभुति का अनुभव होता है। संवत्सरी के दिन जिससे भी मनमुटाव है, खासकर अपने निकटतम सगे संबंधियों से क्षमायाचना कर सद्भावना जगाने का अति उत्तम मार्ग है। क्षमा माँगने से कोई छोटा-बड़ा

तीर्थंकर प्रभु महावीरांचे अंतिम वचन श्रीमद् उत्तराध्ययन सूत्रा वर आधारीत

।। जिनेश्वरी ।।

अध्याय १० : द्रुमपत्रक

प्रवचनकार : उपाध्याय प.पु. श्री. प्रवीणऋषिजी म.सा. *(क्रमशः)*

ही परम-चरम शिखर प्रभुवाणीची यात्रा, याची जशी साधना आराधना कराल प्रश्न उपस्थित होईल की भगवंतांचा हा अंतिम उपदेश आहे, या अध्यायाचा संदर्भ त्या वेळेचा आहे जेव्हा परमात्मा प्रभु महावीर गौतमाला उद्देशून बोलत होते आणि असे पाहिले तर भगवंतांनी तर कोणा एकाला उद्देशून काहीही सांगितले नाही !

त्याचे समाधान आहे की मूळ सिध्दान्त, मूळ सूत्र, अंतिम उपदेश परमात्म्याचा आहे. त्या अंतिम उपदेशाला सुधर्मास्वामींनी संकलित केले, शब्दबध्द केले, संपादित केले. **भावं अत्थं भासं अरहा, सुत्तं गुफंती गणधरा अर्थात अर्थाचा प्रकाश तीर्थंकर देतात आणि त्याला शब्दाचे शरीर गणधर देतात.** अन्न धान्य शेतकरी देतो पण भाकरी आई देते, कापूस शेतात येतो व कापडे गिरणीत तयार होतात. गणधर ही आई आहे, गिरणी आहे. तीर्थंकर हा निसर्ग आहे. निसर्गाने दिलेले दान हे तीर्थंकरांचे दान असते. ज्या स्वरुपात आपण खाऊ शकतो, ग्रहण करु शकतो त्याच रुपात ते आपल्या कामास येते. ज्या रुपात आपण पचवू शकतो त्या रुपात आपल्यापर्यंत पोहचविणारे गणधर आहेत.

काळाचा अपराध अक्षम्य

जीवनात सर्वात मोठे कोणते पाप, अकृत्य असेल तर ते आहे प्रमाद. या प्रमादातूनच सर्व पापांचा, सर्व दुःखाचा जन्म होतो. या प्रमादाची दोन स्वरुपे आहेत. कषाय आणि शिथिलता. प्रमादामुळेच आपण अहंकार करण्यास प्रवृत्त होतो व प्रमादामूळेच आपल्या संयमात, मर्यादा पालन करण्यात शैथिल्य, आळस येतो. प्रमादाचे स्वरुप मात्र खूप लोभस वाटते, सुखावह वाटते. प्रमाद येण्याची कारणे पुष्कळ आहेत आणि कधी-कधी विनाकारण ही प्रमाद येतो.

मजूर खूप लांबून ओझं वाहत असतो. पोहचण्याचे स्थळ अगदी समोर दिसत असतांनाच तिथंपर्यंत पोहचण्याचे दोन मार्गही दिसतात. एक थोडा फिरुन जाणारा मार्गही दिसतो व एक आडमार्गही दिसतो. तो राजमार्ग सोडून आडरस्त्याने जाऊ लागतो. पण हा मार्ग विषम मार्ग असतो. चढ-उताराचा असतो. असा चढ-उतारावरुन वाटचाल करुन तो थकून जातो. ओझे उतरवून तो झोपून जातो. असेच प्रमादाचे सूत्र आहे. ध्येय गाठणे अगदी जवळ असते व एका क्षणाची डुलकी आणि ध्येय हुकलं जातं, सगळी यात्रा व्यर्थ होते. एका क्षणाचा प्रमाद वर्षानुवर्षेच्या तपस्येवर पाणी फिरवतो.

या अंतिमवाणीत भगवंतांनी अप्रमादाचा उपदेश केला आहे. या अंतिम वाणीत अनंत सामर्थ्याचे दान भगवंतानी केले आहे. वेळेच्या बाबतीत प्रमाद करायचा नाही. वेळेचा प्रमाद हा अक्षम्य अपराध आहे. बाकी सर्व अपराधांना प्रायश्चित आहे, इतर सर्व गुन्हे परिमार्जन करण्याची विधी आहे. इतर सर्व चुकांना सुधारण्याची संधी आहे. परंतु वेळेच्या बाबतीत केलेला अपराध अक्षम्य अपराध आहे.

लवसत्तमा

अनुपम उर्ध्वलोकी स्थित देवतांचे आयुष्य ३३ सागरोपम असते ज्याला आपण अल्प समयाचा मुक्तीचा आनंद म्हणू शकतो. त्या देवतांसाठी शास्त्रात

श्री कल्पसूत्र - (भाग २)

लेखक : सुरेश बन्सीलालजी लुणावत, देहूरोड, पुणे. मो. : ९१५८००१३६९

(ऑगस्ट २०२६ अंकापासून पुढे)

श्री कल्पसूत्र या ग्रंथामध्ये २४ वे तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी यांच्याशिवाय तीर्थंकर पार्श्वनाथ, तीर्थंकर नेमिनाथ, तीर्थंकर ऋषभदेव यांचे चरित्र व देशना याबाबत सविस्तर लिहिलेले आहे. याशिवाय इतर तीर्थंकर यांचे जीवन चरित्र संक्षिप्तपणे दिलेले आहे. भ. महावीर स्वामी यांच्या निर्वाणानंतर दोनच गणधर हयातीत होते. ते म्हणजे श्री इंद्रभूति गौतम व दुसरे सुधर्मा स्वामी.

भगवान महावीर स्वामी यांच्या अकरा गणधरांपैकी श्री सुधर्मा स्वामी हे पाचवे गणधर होते. श्री गौतम स्वामी यांना भ. महावीर स्वामी यांच्या निर्वाणानंतर लगेचच केवलज्ञान प्राप्त झाले होते. केवलज्ञान म्हणजे सर्वज्ञ. सर्वज्ञ कधी परंपरेचा वाहक होत नाही कारण आचार्यांना संघाची जबाबदारी घ्यायची असते. अरिहंत स्थान ज्यांना प्राप्त झाले त्यांना संघाचे आचार्य पद देणे म्हणजे त्यांचे स्थान कमी लेखण्यासारखे होते. आचार्य होण्या आधी सुधर्मा स्वामी संघाचे तीस वर्षापासून काम पाहत होते. त्यामुळे भ. महावीर स्वामी यांच्या नंतर गणधर श्री सुधर्मा स्वामी यांनी संघाची जबाबदारी घेतली. श्री सुधर्मा स्वामी अतिशय विद्वान आणि साधक होते. महावीर स्वामी निर्वाणा नंतर सुधर्मा स्वामी केवली झाले आणि आठ वर्षे ते केवली अवस्थेत होते.

सुधर्मा स्वामी नंतर जम्बू स्वामी संघाचे प्रमुख झाले. श्री जम्बू स्वामी यांचे जीवन चरित्र एक मनोहरी वैराग्य प्रतिमेचा मानबिंदू ठरला. राजगृह येथील कोट्याधीश शेठ ऋषभदत्त आणि धारिणी यांचा हा लाडका जम्बू सोळा वर्षाचा जेव्हा झाला तेव्हा आठ राजकन्यां बरोबर त्याचा विवाह ठरला. जेव्हा त्या राजकन्यांना हे कळालं की जम्बू हे संन्यास घेणार आहेत तर त्यांनी आधी लग्न तर करा मग पाहू असे सांगितले. ठरल्याप्रमाणे विवाह झाला. एकदा विवाह झाला की जम्बू संन्यास घेण्याचा विचार सोडून देईल अशी धारणा या राजकन्यांची होती. या विवाहाच्या निमित्ताने जम्बू यांच्या परिवाराला कोट्यावधी रुपयाचे धन आले. हे धन लुटण्याची व दरोडा टाकण्याची तयारी प्रभव नावाच्या दरोडेखोराने केली होती. तो आपल्या ५०० साथीदारांसह दरोडा टाकण्यासाठी जम्बू यांच्या राजमहलावर चाल करून आला. इकडे जम्बू नवविवाहित राजकन्यांना धर्म म्हणजे काय, आत्मा म्हणजे काय, जीवन म्हणजे काय हे समजून सांगत होता. तर राजकन्या त्याला आपल्या मोहपाशा मध्ये ओढू इच्छित होत्या. शेवटी पहाटे पहाटे त्यांना सुद्धा वैराग्य भाव निर्माण झाला.

चोरीच्या उद्देशाने आलेला प्रभव दरोडेखोर हे सगळं ऐकत होता. जम्बूचे कथन व सगळं जन्म आणि मृत्यूचे चक्र ऐकून त्याचे मन बदलले. तो जम्बुंना शरण आला. त्याने मी व माझे सर्व साथीदार तुमच्या बरोबर दीक्षा घ्यायला तयार आहोत असे सांगितले. बातमी वाऱ्यासारखी पसरली. जम्बूचे आई-वडील, आठ राजकन्यांचे आई-वडील, पाचशे चोर असे एकंदरीत ५२७ जणांनी आचार्य सुधर्मा स्वामी यांना वंदन करून दीक्षा देण्याची विनंती केली. भगवान महावीर स्वामी यांच्या निर्वाणा नंतर पहिल्याच वर्षांमध्ये जैन शासनाची ही फार मोठी उपलब्धी होती. दीक्षेनंतर जवळपास बारा वर्षानंतर जम्बू स्वामींना संघाचे प्रमुख पद म्हणजे आचार्य पद देण्यात आले

अस्तित्व जैन समाजाचे – कटु सत्य

जैन धर्माच्या इतिहास आणि संस्कृतीवर आक्रमण

लेखक : मयूर मल्लिनाथ वग्याणी, सांगली. मो. : ९४२२७०७७२१

जैन समाजासाठी दोन अतिशय महत्त्वाचे विषय समोर आले आहेत आणि भविष्यात जैन धर्मावर त्याचे दुरोगामी परिणाम होणार आहेत.

एनसीईआरटीच्या (NCERT) पाठ्यपुस्तकां मधून जैन इतिहास वगळण्यात आला. उत्तर प्रदेशातील १,००,००० प्राथमिक शाळांमधील पाठ्यपुस्तकां मध्ये ऐतिहासिक मुडबिद्री जैन मंदिराची माहिती काढून राम मंदिराची माहिती देण्यात आली आहे. पुढील शैक्षणिक वर्ष २०२६-२७ पासून उत्तर प्रदेशातील एक लाख प्राथमिक शाळांमधून जैन सांस्कृतिक ओळख पुसून टाकली जाईल. या उपक्रमाची सुरुवात चौथीच्या गणिताच्या पुस्तक 'गणित मेला' मध्ये झाली. या पुस्तकाच्या पृष्ठ ३९ वर उल्लेख केलेले हजार खांब असलेले मुडबिद्रीचे मंदिर ऐवजी आता अयोध्येतील श्री राम मंदिर घेईल. एनसीईआरटी समित्यांमधून जैनांना वगळण्यात आलेच नाही तर जैनांचा इतिहासही हळूहळू नष्ट होऊ लागला आहे.

चौथी इयत्तेच्या 'गणित मेला' या पुस्तकात, 'हमारे आसपास हजारों की संख्या में या धड्यांमध्ये जगप्रसिद्ध प्राचीन मुडबिद्री जैन मंदिराचा उल्लेख करण्यात आला आहे, ज्यामध्ये हजार खांबांचे मंदिर आणि त्याची माहिती देण्यात आली आहे. पण आता त्याची जागा अयोध्येतील नव्याने बांधलेल्या राम मंदिराने घेतली आहे. याचा अर्थ पुढील शैक्षणिक वर्षात मुलांच्या पाठ्यपुस्तकांमधून जैन इतिहास देखील काढून टाकला जाणार आहे.

शिवाय, संसद भवनात जैन धर्माचा इतिहास लिहताना तो फक्त २६५० वर्षा पूर्वीचा धर्म आहे असे चुकीची माहिती दिली गेली आहे. देशातील दोन प्रमुख सनातन परंपरे पैकी एकाला कमी लेखून स्वतःला श्रेष्ठ म्हणवून दाखवण्याचा हा चुकीचा प्रयत्न आहे. जैन धर्म हा भारतातील सर्वात प्राचीन धर्म आहे. आपण भारताचे मूलनिवासी आहोत. प्राचीन हिंदुस्थानात जंबुद्वीप भरतक्षेत्राची स्थापना भ. आदिनाथांचा मुलगा चक्रवर्ती भरत यांनी केली आणि त्यांच्या नावावरूनच आपल्या देशाला भारत या नावाने ओळखले जाऊ लागले.

अल्पसंख्याक जैन समुदायाच्या इतिहासावर, संस्कृतीवर आणि समाजावर वर्षानुवर्षे ज्या प्रकारे हल्ले केले जात आहेत, त्यांचा ताबा घेतला जात आहे, छळ केला जात आहे आणि आता वेगवेगळ्या मार्गांनी ऐतिहासिक साहित्य काढून टाकण्याचे प्रयत्न केले जात आहेत, ते चिंताजनक आहे. त्यासाठी प्राचीन ऐतिहासिक जैन मंदिराची माहिती काढून टाकण्यापेक्षा श्रीराम मंदिराचाही समावेश केला असता तर बरे झाले असते. याविरुद्ध कोणीही जैन संत, ऋषी किंवा उच्चभ्रू वर्ग आवाज उठवत नाही, ही देखील खेदाची बाब आहे. तसेच कोणीही शैक्षणिक समित्यांमध्ये किमान एका जैनचा समावेश करण्याची मागणी करत नाही. कारण जर हे असेच चालू राहिले तर ५०-१०० वर्षानंतर ना जैन इतिहास टिकेल ना जैन संस्कृती.

जैन समाजासाठी दुसरा अतिशय महत्त्वाचा विषय

तामिळनाडू उच्च न्यायालयाच्या अलिकडच्या आदेशात जैन समुदायाला बाहेरील आणि आक्रमक असे संबोधण्यात आले आहे. हे केवळ दुर्दैवी नाही तर दक्षिण भारतातील, विशेषतः तामिळनाडू मधील जैन धर्माच्या प्राचीन आणि समृद्ध इतिहासाला

मानव शरीर का दुरुपयोग और अनुपयोग नहीं, सदुपयोग करो

प्रवचनकार : पूज्य विदुषी शारदाबाई महासतीजी

अनन्त करुणा-सागर, परमतत्व के प्रणेता, वीतराग परमात्मा ने भव्यजीवों के भव का अन्त कैसे आए और वे मोक्ष का सुख कैसे प्राप्त करें? इसके लिए सिद्धान्तों (शास्त्रों) की प्ररूपणा की। सिद्धान्त (शास्त्र) में भगवान कहते हैं - ''इस संसार के समस्त सुख अन्त वाले हैं, कोई भी भौतिक-सुख अन्तरहित नहीं है।''

आयुष्य, धन, पुत्र, परिवार, घर, दुकान और फर्म आदि सभी का अन्त आनेवाला है। जिस शरीर की सुरक्षा के लिए इतनी अधिक मेहनत करते हैं, उस शरीर का उसके रूप, बल और बुद्धि का भी अन्त आ जाता है। ये सब चीजें अन्तवाली हैं। कोई भी वस्तु शाश्वत रहनेवाली नहीं है और उन वस्तुओं से मिलनेवाला सुख भी अन्तवाला और अशाश्वत है।

अतः ज्ञानीपुरुष कहते हैं हे चेतन ! आयुष्य का अन्त आए, उससे पहले तू कर्मों का, कषायों का, कुसंस्कारों का अन्त कर दे, जिससे तू अन्तवाली दुनिया में से निकलकर अनन्त दुनिया में अनन्तकाल तक अव्याबाध आत्मिक-सुखों में मग्न होकर आनन्द से निवास कर सकेगा ।

बन्धुओं ! आयुष्य पूर्ण होने पर, आँखें मूँद जाने पर यहाँ की चीजों से तुझे काम होनेवाला नहीं है। अतः मृत्यु आने से पहले मोह, माया और ममता की मृत्यु कर दे, ताकि पुनः मृत्यु का शिकार होना न पड़े। जीवों के सिर पर काल का-मृत्यु का भय रहता है। मृत्यु किसी को भी अच्छी नहीं लगती। स्वप्न में भी किसी को मरण का नाम अच्छा नहीं लगता। इसलिए मृत्यु का भय होते हुए भी मृत्युंजय बनने के लिए कोई प्रयास नहीं करता । किन्तु मरण की प्रणाली बढ़े, इतनी जीव ने मोह, माया और ममता बढ़ा रखी है। मरण के समय भी ममत्व छूटता नहीं है। जीव परलोक से आया, तब अकेला था, और जाएगा, तब भी अकेला ही जाएगा। परन्तु कर्म के संयोग से इसने देह से दोस्ती की है। यह शरीर ऐसा स्वार्थी दोस्त है कि वह तेरी पुण्यवानी खाकर यहीं रह जानेवाला है। किन्तु उसके लिए किये गए पापकर्म का फल भोगने के लिए जीव को नरक, तिर्यंच आदि दुर्गतियों में जाकर भयंकर दुःख भोगने पड़ेंगे ।

जिन्होंने तप और संयम द्वारा अपनी देह का दमन नहीं किया, उन्हें बार-बार भयंकर दुःखदायी देह की जेल में बंद होकर देह के दण्ड भोगने पड़ते हैं । मानव-शरीर का विषय-भोगों में दुरुपयोग करना, सकल दुःखों का मूल है और मानव-शरीर का सदुपयोग सकल सुखों का मूल है। अतः देहान्त होने पर मानव-देह का दाह किया जाए, उससे पहले तू कर्मों का दाह (दहन) कर दे, ताकि पुनः कभी दुःखी होने का वक्त न आए। इस मानव-देह से कर्मरूपी कष्ठों को जलाया जा सकता है। मानव-देह से मोह, माया और ममता का अन्त (मरण-मृत्यु) किया जा सकता है। और मानव-देह से तप, संयम, त्यागादि कीं करणी करके मोक्ष में जाया जा सकता है । अतः मानव-देह का भोग विलास और वैभवों के पीछे दुरुपयोग न करके तप, त्याग और संयम की साधना करके इसका सदुपयोग कर लो । अगर इस देह से तप, त्याग और संयम की साधना नहीं करोगे, उसे मनोज्ञ मनोरम्य सुख-सुविधाएँ देते रहोगे तो उस जीव को कर्म भयंकर दुःखों की गहरी खाई में फेंक देंगे।

अतः इस देह की पद-पद पर दया खाने की आवश्यकता नहीं है। इसने आत्मा की प्रायः कदापि

बिन जाने कित जाऊँ - प्रश्नोत्तरी प्रवचन

प्रवचनकार : आचार्य मुक्तिसागर सूरिश्वरजी म.सा. *(क्रमशः)*

प्रश्न – सामायिक – प्रतिक्रमण में यदि चरवले को लेकर उठ सकते है, तो फिर एकासणे बियासणे में चरवला लेकर क्यूँ नहीं उठा जा सकता ?

– रेखा जे. शाह

उत्तर – वाह भाई वाह! दाद देना पड़ेगी आपके दिमाग की भी (हंसाहंस)। क्या प्रश्न उठते है आपके दिमाग के कम्प्युटर में भी। यह तो ऐसा प्रश्न है कि – सर दर्द या बदन दर्द में यदि Novalgin की टेबलेट ले सकते है, तो फिर – पेट दर्द या छाती के दर्द में भी वो ही दवा (Novalgin) क्यूँ नहीं ले सकते ?

डॉक्टर से यदि ऐसा प्रश्न करो तो वह क्या कहेगा ? यही कि सरदर्द –बदनदर्द एक अलग रोग है और पेट या छाती (सीने) का दर्द एक अलग रोग है। एक की दवा दूसरे में काम नहीं कर सकती । बस वैसे ही सामायिक–प्रतिक्रमण में तो चरवला होता ही है, वो तो यूँ भी चरवले के बिना करना बराबर नहीं है, उठना तो बाद की बात, चरवला तो सामायिक लेने–पारने की क्रिया में खमासमण आदि देते समय सत्तरह संडासे के लिए जरुरी बन जाता है। लेकिन एकासणा बियासणा ये अलग क्रिया है, इसमें उठने का है ही नहीं और न ही वहाँ खमासणा वगैरह देने का होता है, इसलिए तप धर्म की इस एकासणादि में चारित्र धर्म के उपकरण चरवले की जरुरत नहीं होती । ●

प्रश्न – शरीर की प्रमार्जना के लिए १७ ही संडासे क्यों होते है ? उससे कम या ज्यादा क्यों नहीं ?

– कंचन कावेड़ी

उत्तर – इसका उत्तर दे देने पर ऐसे प्रश्नों की परंपरा क्या अटक जायेगी ? नहीं, फिर कोई प्रश्न करेंगे कि पौषध में १८ ही दोष क्यूँ बताये ? काउसग्ग के १९ ही दोष क्यूँ ? या सामायिक के ३२ दोष ही क्यूँ होते है, उससे कम या ज्यादा क्यों नहीं ?

ऐसे समस्त प्रश्नों का जवाब यही होगा कि इससे कम में काम नहीं होता और ज्यादा की जरुरत नहीं होती। जैसे किसी मरीज की ट्रीटमेन्ट कर रहे डॉक्टर को कोई ये नहीं पूछेगा कि दवाई का डोज़ आपने दिया है, उससे कम या ज्यादा चल सकेगा या नहीं ? डॉक्टर क्या बोलेगा ? डोज़ तो मरीज का मर्ज देखने के बाद ही तय किया जाता है न ? बस, वैसे ही उन–उन क्रियाओं में ज्ञानि गुरुभगवंतों को जैसी जैसी जरुरत लगी, वैसी–वैसी वो क्रियाएँ बताई है। एक खमासमण देने में जहाँ–जहाँ प्रमार्जना (पडिलेहन) करने की होती है, वो स्थान कुल १७ ही होते है। अतः १७ संडासे बताये है, कम या ज्यादा नहीं । ●

प्रश्न – प्रतिक्रमण के वांदने (द्वादशावर्त) में पहले वांदने में तो ''आवस्सिआए'' शब्द बोलते है, दूसरे में क्यूँ नहीं ? इसका कारण हमको बताओजी ।

– संध्या तातेड़

उत्तर – अच्छा प्रश्न है यह भी। बताओजी, तो लो बताते है जी ! (हंसाहंस) वांदना यानि गुरु भगवंत को करनेवाले द्वादशावर्त वंदन है। द्वादशावर्त नाम इसलिए है कि १२ आवर्त अहो कायं काय... वगैरह जो हम बोलते है। ऐसे तीन ये, फिर जत्ता भे जवणिज... जं च भे के तीन कुल ६ आवर्त हो जाते है और दो बार वांदना लेने से १२ होकर द्वादशावर्त हो गये।

अब इसमे चूँकि दो बार वांदना लिये जाते है, तो पहली मर्तबा के ६ आवर्त पूर्ण हो जाने के बाद अगले वंदन से पूर्व एकबार अपने अवग्रह में पुनः आते है अतः 'आवस्सियाए' शब्द बोलते है लेकिन दूसरी बार के ६ आवर्त पूर्ण हो जाने के बाद वंदन पूर्ण

धमाका एक ही पर्याप्त है

लेखक : उपाध्याय अमरमुनि

प्रातःकाल के मंगल क्षणों में हम प्रभु के चरणों में, उस महाप्रकाश के चरणों में वन्दना के दो बोल अर्पण करते हैं। उन्हीं की स्तुति उन्हीं के चरणों में अर्पण करते हैं। उन्हीं का नाम उनके ही चरणों में अर्पण करते हैं। नाम भी प्रभु का और अर्पण भी उन्हीं चरणों में। उनका ही ज्ञान उनके ही चरणों में अर्पित करते रहे हैं। यह है भक्ति जो हमारे लिए सरलतम मार्ग है।

बड़ा कठिन है तप का मार्ग

संसार में तप की भी बड़ी महिमा है। इतिहास के पृष्ठों पर अंकित ऐसे-ऐसे दिव्य और उग्र तप है कि हम तो कल्पना भी नहीं कर सकते। एक-एक वर्ष तक का बाहुबली का तप। दिन ही नहीं, सप्ताह ही नहीं, महीनें निकल जाते हैं लेकिन एक अन्न का दाना नहीं लेते मुँह में और न पानी की बूँद, कितना उग्र तप! तूफान आते हैं, झकझोर देते हैं। लेकिन निश्चल खड़े रहते हैं। लताएँ चढ़ जाती हैं लपेटती हुई शरीर को, सर्प आते हैं, पैरों को लपेट लेते हैं। चिड़ियाओं ने घोंसले बना दिये है बालों में। लेकिन बाहुबली ऐसे अचल खड़े हैं जैसे कोई प्रस्तरमूर्ति हो।

वैदिक तपों को भी देखते हैं इतिहास के पन्नों पर तो चकित होते हैं हम। बस एक टांग पर खड़े हैं तपस्वी, महीनों तक अपने अंगूठों पर खड़े हैं। एक पैर के आधार पर वर्ष पर वर्ष बीत जाते हैं। पारणे में सूखे पत्ते चबाकर पुनः तप प्रारम्भ करते हैं। कितना यह उग्र रुप है तप का! हमारा तप क्या है इन तपों के सामने ?

कठिनतम है ज्ञानमार्ग

ज्ञान का विशाल सागर लहरा रहा है। अथाह और अपार है ज्ञान का महासागर। दो-चार शास्त्र पढ़ लेते हैं लोग और ज्ञानी होने का दावा करने लगते हैं। दो-चार डिग्रियाँ हासिल कर लेते हैं और पण्डित बन बैठते हैं। लेकिन क्या ज्ञान है? सागर में से एक बूँद भी नहीं है। उस केवलज्ञान के समक्ष क्या ज्ञान है हमारा?

श्रुतकेवली आचार्य भद्रबाहु के समक्ष क्या ज्ञान है हमारा? अनन्त है ज्ञान, असीम है। ज्ञान की कोई सीमा नहीं है। हम कितना प्राप्त कर पाते हैं?

और भी बहुत से मार्ग हैं। लेकिन इन्सान जिस स्थिति में से गुजर रहा है, उसके समक्ष बस एक ही सरलतम मार्ग है कि वह अपना मन प्रभु के चरणों में समर्पित कर दे, अपनी भावना और अपना सर्वस्व समर्पित कर दे। यह भक्तिमार्ग है आसान **''हस्तावंजलयः कथाश्रुतिरतः कर्णोक्षिसम्प्रेक्षते''**

कानों से प्रभुकथा सुन लेता है। आँखों से प्रभुदर्शन कर लेता है। प्रभु की वन्दना में अपने दोनों हाथ जोड़ लेता है। यह एक ऐसा अद्‌भुत रुप है भक्ति का कि जो मन के मैल को धो डालता है।

तप यद्यपि मैल को साफ करता है लेकिन जरा-सा अविवेक हुआ नहीं कि तप का अहंकार हो जाता है जो बहुत बड़ा मद है। आठ मदों में तपमद भी एक बड़ा भयंकर मद है। कहा है कि तप का अहंकार मैल को साफ नहीं करता बल्कि और अधिक कर्म-मल इकट्ठा कर लेता है। तप के नाम पर बड़े-बड़े आडंबर चलते हैं। ऐसे तप से क्या प्राप्त कर पाता है मनुष्य? इसी प्रकार ज्ञान का भी मद बताया है प्रभु महावीर ने ज्ञान है इच्छा, वासना आदि पापों को धोने के लिए। लेकिन वह सच्चा ज्ञान कहीं दूर रह जाता है और ज्ञान के नाम पर अज्ञान ही इकट्ठा कर लेता है इन्सान। थोड़ा-बहुत रट लेता है, पढ़ लेता है और बहुश्रुत होने का अहंकार जागृत हो जाता है जिससे और अधिक पापों का अर्जन कर लेता

जैन धर्म और अपरिग्रहवाद

लेखक : राष्ट्रसंत श्री गणेशमुनि शास्त्री

अहिंसा जैन धर्म का प्राण है तो अपरिग्रह उस प्राण की पहचान, उसकी श्वास है। इस तरह जैन धर्म में अपरिग्रहवाद का महत्त्वपूर्ण स्थान है। शास्त्र और सन्त सदैव ही अपरिग्रहवाद को अपनाने पर जोर देते रहे हैं। लेकिन भौतिकवाद कुछ इस तरह हावी है कि जैन समाज अपरिग्रहवाद के महत्त्व को भूलता जा रहा है। उसने अपरिग्रहवाद का 'अ' हटाकर परिग्रह को ही व्रत मान लिया है। जैन समाज भारत का धनिक समाज है। राष्ट्र के व्यापार एवं उद्योग पर उसका अधिकार है। जिस समाज के पास व्यापार और उद्योग का महत्त्वपूर्ण कार्य है, वहाँ सम्पन्नता तो होगी ही। देश का सम्पन्न वर्ग यदि धन का परिग्रह करने लगे तो फिर उस देश में निश्चित रूप से विपन्नता बढ़ेगी। जहाँ धन के प्रति लोभ और लालच बढ़ता है, वहाँ पाप की प्रवृत्ति भी बढ़ने लगती है। परिग्रह को इसी कारण पाप का मूल कहा गया है। सारी बुराइयों की जड़ परिग्रह है। इस परिग्रह के कारण मानव के मन पर लोभ की आसुरी भावना छा रही है। समाज और राष्ट्र में अमीर-गरीब के बीच रेखा खिंच रही है। सभी धर्मों में संग्रह की प्रवृत्ति को बुरा मानकर मानव को आवश्यकता से अधिक अर्जित सम्पत्ति का विसर्जन करने को कहा है।

प्रकृति अपरिग्रह का प्रतीक

पानी बाढ़े नाव में, घर में बाढ़े दाम ।
दोऊ हाथ उलीचिए यही सयानो काम ।।

सागर सरिताओं से प्राप्त जल को मानसून के माध्यम से वापस लौटाकर अपरिग्रह की भावना का प्रदर्शन करता है। कूप, तालाब, नदियाँ, वापिकाएँ अपने जल को लौटाकर ग्रीष्म आते-आते सूख जाती हैं। कूप का मृदु जल प्राप्त कर पथिक कूप को धन्यवाद देते हैं तो साथ ही जिस कूप का जल पथिक की प्यास नहीं बुझा पाता, उसका जल हवाएँ भी नहीं छूतीं। वह जल-कूप सड़ने लगता है। परिग्रही लोग उस सड़े हुए कूप की तरह बन जाते हैं, जिनके धन का कोई उपयोग नहीं होता। धन का यह परिग्रह अनेक पाप-वृत्तियों को पैदा करता है।

धन को भोगने वाला ही नहीं

सन्तों का जीवन तो बहते हुए जल के समान है। गंगा हिमालय से निकलती है। जब हिमालय की बर्फ पिघलती है तो वह पानी बनकर सागर की ओर चल देती है। सन्त भी एक स्थान से दूसरे स्थान की यात्रा करते हैं। वे कभी हिमालय की चोटियों पर पहुँचते हैं तो कभी सागर के तटों पर । मुझे भी जीवन में दूर-दूर के प्रदेशों को देखने और वहाँ के लोगों को परखने का मौका मिला है। ऐसे छोटे ग्राम में भी गया, जहाँ मात्र पाँच-सात ही घर थे। उस महानगर में भी गया, जहाँ आकाश में रात होती है धरती पर नहीं। दिल्ली-मुंबई सब कुछ देखा, लेकिन एक बात यह अवश्य देखने को मिली कि जिस व्यक्ति के संतान नहीं थी, वह कंजूस और परिग्रही प्रवृत्ति का अधिक था। सब जगह और सभी ऐसे हों यह बात मैं नहीं कहता, मगर अधिकांश लोग ऐसे ही मिले। यह मेरी अपनी अन्वेषण की स्थिति है।

धन बड़ी मुश्किल से कमाया जाता है। उसे बेवजह उड़ाना मूर्खता है, मगर उसका उपयोग स्वयं पर करने के पश्चात यदि समाज के लिए किया जाये तो अधिक लाभकारी सिद्ध होगा। कुओं का पानी मनुष्य अपने लिए उपयोग में लाता है, अधिक होने पर उसी पानी का प्रयोग वह जानवरों के लिए भी करता है, और

एक नजर भीतर की ओर

प्रवचनकार : डॉ. श्री समकितमुनिजी म.सा.

छोटी बात को बड़ा नहीं बनाना । छोटी बात को बड़ी बनाने में हम एक्सपर्ट हैं। हैं ना ? छोटी बातें जब बड़ी बन जाती है तब आदमी अपना आपा खो देता है। किसी ने हमें नमस्ते नहीं किया...। यह बात बड़ी है या छोटी ? छोटी है। लेकिन हम इतनी छोटी सी बात को भी बड़ा बना देते हैं। आपका जन्मदिन है। किसी ने आपको बधाई नहीं दी...। बात छोटी है या बड़ी ? छोटी। फिर भी आप इसे बड़ी बनाते हो । सास ने किसी बात पर बहू को उलहाना दिया, यह बात छोटी है, लेकिन नादानी के कारण इस छोटी बात को बहू बड़ी बना देती है।

मेरा कहना है कि छोटी बातों से परेशान ना हो अपितु खुश हो जाओ । सुबह-सुबह अखबार देखा, उसमें लिखा था पेट्रोल ५० पैसे सस्ता । खुश हो जाओ। क्योंकि खुश होने की बात है । ऐसी छोटी बात को बड़ी बना दो और खुश हो जाओ, रात को नींद भी अच्छी आएगी । लेकिन ऐसी खुशियाँ हम कहाँ मना पाते हैं । बेटे ने आपको दो महीने बाद जय जिनेंद्र बोला...। आप खुश होंगे या नाराज ? ये प्रसंग खुश होने का था या नाराज होने का? खुश होने का । हम इस खुशी को एक बड़ी खुशी बना सकते थे। लेकिन हम इस खुशी को गम में बदल देते हैं। आप कहते हो कि दो महीने तक कहाँ था? बंधुओ ! एक खुशी आपके पास आई थी। लेकिन आपको उस खुशी को सैलिब्रेट करना नहीं आया। हम इन चीजों में खुश नहीं होते। हम जिन छोटी बातों को इग्नोर कर सकते थे उनको इग्नोर करने की बजाए बड़ा बना देते हैं।

उसका परिणाम क्या होता हैं ? परिणाम यही होता है कि हम भीतर से खाली होते चले जाते हैं। बाहर से हम भले ही फल-फूल रहे हों, बाहर से भले ही हम भरे-भरे दिखें, लेकिन भीतर से हम खाली होते जाते हैं। सब कुछ है, लेकिन क्या आपके पास भीतर की खुशी है? हम लोग बाहर से भरने के चक्कर में भीतर से खाली होते चले गए। किसी ने नमस्ते नहीं किया तो इससे हमारा अभिमान हर्ट हुआ। उस अभिमान को भरने के लिए हम गुस्सा करेंगे, उसे पुराने प्रसंग बताएँगे, दो-चार, दस साल पहले की घटनाएँ याद दिलाएँगे, इससे हम भीतर से खाली हो जाते हैं। किसी ने हमें कुछ बोल दिया और हमें क्रोध आ गया, क्रोध हमारे भीतर गया और उस क्रोध ने हमारे भीतर जाकर अपना स्थान बना लिया, अपनी स्पेस बनाली जिससे हम भीतर से खाली हो गए। बाहर भरने के चक्कर में भीतर हमारी नजर जाती नहीं। भीतर में चिंता गई, गुस्सा गया, अभिमान गया, हम भीतर से खाली हो गए।

बाहर आदमी के पास सब कुछ है। लेकिन भीतर से आदमी खाली है। आप भीतर भी एक नजर डालो। माँ अपने छोटे बच्चे की देखभाल करते हुए भी घर का काम करती रहती है। माँ घर का सारा काम भी करती है और आधे-आधे घण्टे में अपने बच्चे पर भी नजर डालती रहती है। बच्चा रोए तो उसे शांत भी करती है और शांत करके अपने काम में फिर लग जाती है। ठीक ऐसी ही जिंदगी आप भी जीओ जैसे माँ घर का काम करते - करते बच्चे पर एक नजर डालती रहती है उसी प्रकार आप लोग भी दुनियादारी निभाते हुए एक नजर भीतर की ओर डालें ।

भीतर की ओर नजर डालोगे तो जो भीतर में द्वेष, क्रोध आदि के कारण रिक्त स्थान हुआ है वो भरना प्रारंभ हो जाएगा। छोटी-छोटी बातों मे खुश होना शुरु

भगवान महावीर के सिद्धान्त

लेखक : उत्तर भारतीय प्रवर्तक श्री आशीषमुनिजी म. सा.

आज से २६०० वर्ष पूर्व भारत वर्ष की सामाजिक, राजनीतिक एवं धार्मिक स्थिति बहुत ही दयनीय थी। मानव-मानव में ऊँच-नीच व छुआछूत का भेद चरम सीमा पर था। उच्च जाति के कहलाने वाले लोगों का निम्न जाति के लोगों के स्पर्श की बात तो दूर, उनकी परछाई तक से घृणा की जाती थी। निम्न जाति के लोगों की परछाई उच्च जाति के लोगों पर पड़े तो उन्हें ताड़ित तर्जित व पीड़ित किया जाता था। उच्च जाति के लोग जिस कुएँ से पानी निकालते थे, उस कुएँ से निम्न जाति के लोगों को पानी भी निकालने का अधिकार नहीं था। उपनिषद, वेद या गीता आदि धार्मिक ग्रंथ पढ़ने की बात तो दूर रही वे उन ग्रन्थों की बातों को सुन भी नहीं पाते थे, उन्हें कोई भी धार्मिक अनुष्ठान करने का अधिकार नहीं था। उन लोगों से गुलाम की तरह काम लिया जाता था। उन निम्न जाति के कहलाने वाले लोगों की मानसिकता भी ऐसी ही बनी हुई थी। नारी जाति पर भी उस समय घोर अत्याचार किया जाता था। उन्हें भी पूजा-पाठ करने या धार्मिक ग्रन्थ पढ़ने या धार्मिक अनुष्ठान करने का अधिकार नहीं था ।

नारी को पुरुषों ने अपनी वासना पूर्ति का साधन मात्र बना रखा था। उन्हें पैरों की जूतियों की तरह पद दलित किया जाता था। घर की चार दीवारी के अन्दर रहकर बच्चों को जन्म देना व उनका भरण-पोषण करते हुए गृहस्थी का भार ढोना, बस इतना ही काम था नारी का। कभी जिस देश में सीता, सावित्री, गौरी, पार्वती, लक्ष्मी, सरस्वती आदि की पूजा हुआ करती थी, उस देश की जगत्जननी माता जो अपने अनंत वात्सल्य व ममत्व से बच्चों का लालन पालन करते हुए उच्चतम संस्कार को देकर मानव में ही महामानव की निर्मिति करती थीं, उस मातृजाति की ऐसी दयनीय स्थिति थी।

उस समय धर्म के नाम पर से अमुक अमुक देवी-देवताओं के मन्दिरों में या पहाड़ी शिलाओं को देव रूप मानकर अपने धन-वैभव-पुत्र-कलत्र आदि की प्राप्ति के लिए भेड़, बकरी, ऊँट, पाड़ा, मुर्गा, कबूतर ही नहीं मनुष्य तक की भी बलि दी जाती थी, मानव अपने स्वार्थों की पूर्ति के नाम से इतना निष्करुण हो गया था। उस समय यज्ञीकों का नारा था कि अश्वमेध यज्ञ, गोमेध यज्ञ तथा नरमेध यज्ञ करने वाले यज्ञकर्ता यज्ञ के प्रभाव से सीधे स्वर्ग मे जाकर इन्द्र की पदवी प्राप्त करता है। तत्कालीन धर्मात्मा कहलाने वाले मानव की ऐसी रूढ धारणा के आधार पर स्वर्ग व इन्द्र पद पाने के लिए बढ़-चढ़कर अश्वमेध आदि यज्ञ किये जाते थे ।

ऐसे दुःखद समय में वैशाली के महाराजा सिध्दार्थ व महारानी त्रिशलादेवी के पावन प्रांगण में अमावस्या की रात्रि के अन्धकार को छिन्न-भिन्न करने वाले प्रभात के सूर्य की तरह एक बालक 'वर्धमान' का (ईसा से ५९९ वर्ष पूर्व) चैत्र सुदी तेरस को जन्म हुआ। अद्वितीय प्रतिभाशाली बालक वर्धमान का मन तत्कालीन सामाजिक, धार्मिक आदि स्थिति से पीड़ित हो समाज में नई चेतना, नई क्रान्ति, नई स्फुरणा लाने तथा मानव मात्र में, अहिंसा, दया, करुणा संवेदना के सद्गुण जगाने के लिए, इन्द्रियजन्य सुख सुविधा व राजसी वैभव को छोड़कर अकिंचन साधक बन साधना पथ पर आगे बढ़े ।

साधना काल में वर्धमान को देव-मनुष्य तथा तिर्यचों द्वारा लोमहर्षक उपसर्ग दिये गये। २२ प्रकार के परिषहों का पहाड़ उन पर टूट पड़ा पर वे मेरुवत अकंप

कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) का उपयोग

लेखक : डॉ. धर्मचन्द जैन, जयपुर

विज्ञान एवं तकनीकी युग में विश्व को कृत्रिम बुद्धित्ता (Artificial Intelligence) की नई आश्चर्यकारी तकनीक प्राप्त हुई है। इस तकनीक पर मानवहित में विचारार्थ १९-२० फरवरी २०२६ को नई दिल्ली में 'इण्डिया एआई इम्पैक्ट समिट' का आयोजन हुआ। इसमें १०० से अधिक देशों, लगभग २० राष्ट्राध्यक्षों, विभिन्न देशों के ५० से अधिक मन्त्रियों तथा लगभग ५०० वैज्ञानिकों एवं विशेषज्ञों ने भाग लिया। विशेषज्ञों के द्वारा विचार मंथन १६ फरवरी से ही प्रारम्भ हो गया था। यह शिखर सम्मेलन भारत को कृत्रिम बुद्धिमत्ता (Artificial Intelligence) का प्रमुख केन्द्र बनाने की दृष्टि से सफल रहा। वर्तमान युग में अनुसन्धान, नवाचार, कौशल विकास, स्टार्ट अप, स्वास्थ्य, शिक्षा, कृषि, प्रशासन आदि में तेजी से विकास एवं निपुणता के लिए कृत्रिम बुद्धिमत्ता को अतीव उपयोगी समझा जा रहा है। तकनीकी विकास की दृष्टि से यह एक क्रान्तिकारी क़दम है। इस सम्मेलन में उपर्युक्त बिन्दुओं के अतिरिक्त डिजिटल अर्थव्यवस्था में **एआई** की भूमिका, इसका जिम्मेदारीपूर्ण उपयोग, डेटा सुरक्षा तथा आम जनता तक AI को पहुँचाने पर विचार किया गया।

प्रधानमन्त्री श्री. नरेन्द्रजी मोदी ने एआई को नैतिक एवं दिशानिर्देश आधारित, पारदर्शी नियन्त्रण, राष्ट्रीय स्वामित्व, सुलभ एवं समावेशी तथा वैध एवं सत्यापन योग्य बनाने की योजना प्रस्तुत की, जिसे 'मानव' (MANV) विजन नाम दिया गया। ब्रिटेन के पूर्व प्रधानमन्त्री ऋषि सुनक ने कहा कि जो तकनीक अपनायेगा, वह आगे बढ़ता जायेगा। प्रधानमन्त्री श्री. नरेन्द्रजी मोदी ने कहा दुनिया में दो तरह के लोग हैं, एक जिन्हें एआई में भय दिखता है तथा दूसरों को भाग्य। मैं गर्व से कहता हूँ कि हमें एआई में भय नहीं भारत का भाग्य दिखता है। इस शिखर सम्मेलन में भारत के नेतृत्व को वैश्विक समर्थन प्राप्त हुआ है, जिसमें कम्पनियों द्वारा लगभग २५० अरब डॉलर का निवेश सम्भावित है।

सम्पूर्ण विश्व में कृत्रिम बुद्धिमत्ता का स्वागत किया जा रहा है, साथ ही इसको लेकर विभिन्न आशंकाएँ भी बनी हुई हैं। स्वागत तो इसलिए किया जा रहा है कि इसके माध्यम से विभिन्न औद्योगिक इकाइयों, बैंकों, सरकारी कार्यालयों, चिकित्सा कार्यों आदि में तीव्रता एवं निपुणता के साथ कार्य सम्पन्न होंगे। अभी भी इसका उपयोग प्रारम्भ हो गया है तथा अनेक शोधकर्ता इसके भावी उपयोग की दिशा तय कर रहे हैं। विद्यालयों के छात्र एआई के माध्यम से शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं। कई कम्पनियों के साक्षात्कार मनुष्यों के द्वारा नहीं, अपितु AI के माध्यम से लिए जा रहे हैं। कुछ लोग AI का उपयोग कर नयी किताबों का लेखन कर रहे हैं। एक भाषा से दूसरी भाषा में अनुवाद कार्य कुछ पलों में हो जाता है। यह मानव के बौद्धिक कार्यों में सहायक है। साथ ही जटिल शल्य चिकित्सा करने में भी सक्षम है। रोबोटिक सर्जरी एआई की देन है। रोग का निदान अधिक आसान हो रहा है। लोगों के भाषण की विषयवस्तु AI के माध्यम से पलक झपकते ही तैयार हो जाती है। इससे फसल का पूर्वानुमान किया जा सकता है। इस तरह इससे होने वाले लाभों की लम्बी सूची है। AI कभी थकता नहीं। यह चौबीसों घण्टे कार्य कर सकता है। इसलिए इसका स्वागत किया जा रहा है।

आशंकाओं की भी लम्बी सूची है। इसके कारण